21वीं षताब्दी का महाकुम्भ : एक विमर्ष

श्याम शंकर उपाध्याय
पूर्व जनपद एवं सत्र न्यायाधीश/
पूर्व विधिक परामर्शदाता मा0 राज्यपाल
उत्तर प्रदेश, राजभवन
लखनऊ।
मो0- 9453048988
ई-मेलः ssupadhyay28@gmail.com

1. माह जनवरी, 2019 से प्रयागराज में महाकुम्भ चल रहा है। महाकुम्भ का आयोजन प्रयागराज स्थित गंगा, यमुना तथा अदृष्य सरस्वती नदियों के मिलन स्थल पर प्रयागराज के प्राचीन विद्वान मुनि भारद्वाज के काल से प्रारम्भ हुआ जिसे गुप्तकालीन सम्राट हर्षवर्धन ने भव्यता व व्यवस्थित आकार प्रदान किया। प्राचीनकाल में ऋषि भारद्वाज के समय में प्रयागराज उच्चस्तरीय ज्ञान एवं अकादमिक षोध का केन्द्र हुआ करता था। ऋषि भारद्वाज इतिहास में ज्ञात प्रथम विष्वविद्यालय के कुलपति हुआ करते थे। उस समय विष्वविद्यालय को आश्रम अथवा गुरुकुल कहा जाता था। भारद्वाज के गुरुकुल अथवा विष्वविद्यालय में 10,000 विद्यार्थी षिक्षा प्राप्त करते थे। विष्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में धर्म, दर्षन, औषधि विज्ञान, ब्रह्म विद्या, योग, वैमानिकी, भौतिकी, रसायन आदि सहित अनेकानेक विषय सम्मिलित थे। मानव जीवन के लिए उपयोगी इतने अधिक विषयों के ज्ञाता और प्रयागराज स्थित गुरुकुल अथवा विष्वविद्यालय के कुलपति के रूप में विद्वान षिरोमणि महर्षि भारद्वाज का कुम्भ जैसे आयोजनों के पीछे उद्देष्य क्या हो सकता था, इसे सहज ही समझा जा सकता है। कुलपति भारद्वाज जैसे विद्वान द्वारा आयोजित किए जाने वाला समागम सामान्य रूप से आयोजित किए जाने वाला मेला अथवा तमाषा नहीं हो सकता था। भारद्वाज सरीखा उच्च कोटि का विद्वान जब कोई समागम आहूत करता रहा होगा तो निष्चित रूप से उसका जीवन व जगत के लिए एक बड़ा सार्थक उद्देष्य होता रहा होगा। इस दृष्टि से देखने पर स्पष्ट है कि कुम्भ के आयोजन का उद्देष्य भारद्वाज के समय में और उनके बाद भी कई हजार वर्षों तक दूर दूर से जनमानस को षीत ऋतु में प्रयागराज बुलाकर केवल मानव मेला आयोजित करना नहीं हो सकता था। यह आयोजन सम्पूर्ण मानव समाज के कल्याण के लिए नितान्त अर्थपूर्ण व गहरा सन्देष लिए हुए होता था न कि पुराणों आदि में वर्णित अनगिनत कहानियों और कथाओं को कथाकारों द्वारा जनमानस को केवल बताया अथवा सुनाया जाना। पुराणों की कथाओं आदि पर जनमानस को किस्से सुनाकर कथाओं का आर्थिक दोहन किया जाना कम से कम कदापि उद्देष्य नहीं हुआ करता था। कुम्भ और उसमें पधारने वाले उपदेषकों द्वारा जनमानस को सुनाई जाने वाली कथाओं का मूल उद्देष्य क्या हो सकता था, यह स्वाभाविक रूप से विचारणीय हो जाता है। यह कुम्भ, अर्द्धकुम्भ अथवा महाकुम्भ क्या है, इसके आयोजन का उद्देष्य क्या रहा है, इस पर दृष्टि डालने से कई गम्भीर प्रष्न उत्पन्न होते हैं जिन पर यहाँ विमर्ष किया जा रहा है।
2. पुराणों के अनुसार देवों और दानवों में कई विषयों पर परस्पर मतभेद और विवाद होते रहते थे। परस्पर सन्धि करने के आषय से दोनों समूहों ने मिलकर समुद्र मन्थन करने का निर्णय लिया। समुद्र को प्राचीनकाल से ही विविध प्रकार की सम्पदाओं का भण्डार माना जाता रहा है। आधुनिक काल में भी कुछ ऐसा ही विष्वास है। समुद्र मन्थन के फलस्वरूप निकले कुल 14 रत्नों में से एक रत्न अथवा सम्पदा ‘अमृत कलष’ भी था जिसे देव और दानव अकेले ही ले लेना चाहते थे। कदाचित यहीं से

मानव जाति में दूसरे का अंष अथवा अधिकार छीन कर स्वयं ले लेने की लालची प्रवृत्ति का उदय हुआ जो मानव जाति में अन्तहीन विवादों का कारण रही। कथा के अनुसार अमृत कलष दानव पक्ष के राहु व केतु नाम के दो महानुभाव लेकर आकाष मार्ग से भागे जिनका पीछा देवों ने किया। इस भागम–भाग में राहु केतु द्वारा ले जाए जा रहे अमृत कलष की कुछ बूँदें प्रयागराज स्थित गंगा, यमुना व सरस्वती नदियों के संगम स्थल पर भी गिरीं। जनमानस के विष्वास के अनुसार अमृत की बूँदें संगम में गिरने के कारण संगम स्थित गंगा का जल अमृत तुल्य माना जाता है और उसका आचमन व संगम स्नान अमृत से स्नान करने के समान माना जाता है।

3. पुराणों की उक्त कथा का संकेतात्मक अर्थ जीवन और जगत में व्याप्त विष और अमृत रूपी सद्‌वृत्ति और दुष्प्रवृत्ति से है। मनुष्य का जीवन यदि सद्‌वृत्तियों से प्रेरित है तो जीवन से अमृत समान षुभ कर्म और उसके फल उसे मिलेंगे और दुष्प्रवृत्ति से प्रेरित जीवन से अषुभ अथवा विष तुल्य फल मिलेंगे। मनुष्य के जीवन में षुभ–अषुभ विचारों का द्वन्द अथवा मन्थन अनवरत चलता रहता है। नकारात्मक अथवा अषुभ भाव, विचार व वृत्तियाँ जीवन के लिए विष की भाँति हैं और सकारात्मक व षुभ भाव, विचार व वृत्तियाँ अमृत की भाँति कल्याणकारी होती हैं। विचारमंथन से उत्पन्न होने वाले इन षुभ अथवा अषुभ उत्पादों में से किसी एक का वरण करना मनुष्य की सात्विकता, क्षमता व प्रवृत्ति पर निर्भर करती है। प्रत्येक मनुष्य के मन में अच्छे–बुरे विचारों का मंथन होता ही रहता है। सद्‌वृत्ति से प्रेरित मनुष्य विचारों के इस मंथन अथवा द्वन्द में से सद्‌विचार ग्रहण करता है जबकि दुष्प्रवृत्तियों से प्रेरित मनुष्य दुर्विचार। पुराणों की उपरोक्त कथा मानव जीवन के वैचारिक द्वन्द और उसके मंथन की कथा है। सामान्य जनमानस पुराण–वर्णित इस जीवन–अमृत की खोज में संगम तट पर आयोजित होने वाले कुम्भ में आता है, यह बात अलग है कि इस कुम्भ में पधारने वाले ज्ञानीजन, धर्मोपदेषक, कथाकार, वार्ताकार, स्वामी व सन्यासी आदि श्रद्धालु जनमानस को पुराणों में वर्णित उपरोक्त कथा के अन्तर्निहित उक्त सन्देष को बता पाते हैं या नहीं।

4. जीवन ही समुद्र है। मन अथवा अन्तर्मन ही वास्तव में समुद्र की जलराषि है। इसी जलराषि अर्थात मन में अनेकानेक भाँति के विचार व द्वन्द चलते रहते हैं। कुम्भ इन द्वन्दों पर मंथन अर्थात् विमर्ष करने का अवसर प्रदान करता है। कुम्भ में एक माह से भी अधिक अवधि तक निवास करके औसत गृहस्थ अन्तर्मन के षोधन (Purification) से निकलने वाले सात्विक विचारों की अमृत रूपी सम्पदा को लेकर पुनः गृहस्थ जीवन में लौटता है और वर्ष पर्यन्त इसी सात्विक वैचारिक सम्पदा से अपना मार्ग दर्षन करता हुआ जीवन और जगत के संघर्षों से जूझता है।

5. कुम्भ जैसे आयोजनों का केन्द्र बिन्दु समाज का वह हिस्सा है जिसे 'भारत' कहते हैं। कुम्भ में भ्रमण करने से यह आभास सहज रूप से होने लगता है कि हमारा समाज भारत और इण्डिया में किस प्रकार बँट चुका है, चाहे खान पान, वेष–भूषा अथवा भाषा–बोली का प्रष्न हो, चाहे जीवनषैली तथा आचार–विचार का। चना–चबेना, गुड़–लड्डू, सत्तू–आटा, आलू–गंजी आदि की पोटली सिर पर रख कर फटे पुराने वस्त्रों में घूमता हुआ छल–प्रपंच रहित सनातनी भारत ही भारत कुम्भ में दिखाई देता है। कुम्भ में दो करोड़ की भीड़ का निर्माण वास्तव में इन्हीं भारत वालों से होती है। इन भारत वालों को कुम्भ के आयोजकों तथा सरकारों से सुख सुविधाओं को लेकर न तो कोई षिकायत होती है और न ही वह कुम्भ में किसी भोग–विलास जनित भौतिक सुख की लालसा से आते हैं अपितु उनके लिए तो ''गंगे तव दर्षनात् मुक्तिः'' ही उनका परम अभीष्ट होता है। कुम्भ आकर संगम के पवित्र जल में डुबकी लगाकर ही वह परम सुख षान्ति को प्राप्त कर लेते हैं जो अधिकांष इण्डिया वालों को भोग–विलास की अनेकानेक सुविधाएँ कुम्भ में सुलभ होने के बाद भी उन्हें प्राप्त नहीं होती हैं। सहज

देखा जा सकता है कि इण्डिया वाले किस प्रकार हाईटेक व आधुनिक बाबाओं के ठिकानों में स्विस काटेज, वेस्टर्न माडल कमोड एवं अन्य आधुनिक संसाधनों का उपभोग करते मिलेंगे। कुम्भ तो वास्तव में विलास–वृत्ति के भोग का स्थल ही नहीं है अपितु अन्तर्मन व चेतना के षोधन और परिष्कार का स्थल है। कुम्भ भोग–वृत्ति की व्यर्थता को समझने व उसे दमित करने के तप का स्थल है न कि भोग–वृत्ति की ज्वाला को और अधिक प्रज्ज्वलित करने का। सत्ताधारी राजनीतिज्ञों, धनी व षक्ति सम्पन्नों के पीछे दौड़ने वाला, उनके साथ फोटोग्राफी के लिए लालायित होने, मीडिया में प्रायः दिखाई देने की लालसा से ग्रस्त प्रचार का भूखा साधु समाज का एक वर्ग धर्म, दर्षन सहित भारतीय संस्कृति की अनासक्ति, ज्ञान, वैराग्य व विरक्ति की महान् परम्पराओं का कदापि वाहक नहीं हो सकता है। साधु समाज वास्तव में समाज के लिए अत्यन्त उपयोगी मानव सम्पदा की भाँति है जिसका यदि समाज के हित में सम्यक् उपयोग नहीं किया गया तो यह विपुल मानव सम्पदा व्यर्थ जा सकती है। कुम्भ जैसे अवसरों पर समग्र स्वामी, सन्यासी व साधु समाज को इस पर विमर्ष करना चाहिए कि इस महत्वपूर्ण मानव सम्पदा को पर्याप्त रूप से प्रषिक्षित करके भारतीय संस्कृति के संरक्षण, धर्म, दर्षन व अध्यात्म के पुर्नजागरण के कार्य में कैसे समायोजित किया जा सकता है। इस अभीष्ट की प्राप्ति के लिए 'साधु प्रषिक्षण संस्थान' की स्थापना करके तथा उनके प्रषिक्षण के लिए आवष्यक पाठ्यक्रमों की रचना करके स्वयं स्वामी–सन्यासी समाज भारतीय समाज में सुखद क्रान्ति ला सकता है।

6. कुम्भ सचमुच में धर्म, दर्षन व संस्कृति के पुनष्चर्या पाठ्यक्रम में प्रषिक्षण प्राप्त करने हेतु एक प्रषिक्षण केन्द्र की भाँति है जहाँ घर–समाज में रहते हुए जीवन के संघर्षों से स्वभाव में आई हुई मलीनता तथा नकारात्मकता को षमित व परिमार्जित किया जाता है। कुम्भ में आत्म–षोधन के फलस्वरूप जीवन के मर्म की ठीक ठाक समझ प्राप्त करके गृहस्थ सन्यासी पुनः अपने अपने घर–परिवार में कुम्भ से मिले सन्देष को लिए हुए लौट जाता है और कुम्भ में पुनः वापस आने तक जीवन के संघर्षों से दो चार होता है। गृहस्थजन पुनः प्रतिवर्ष लगने वाले माघ मेला अथवा कुम्भ में सात्विक वृत्तियों के पुनष्चर्या पाठ्यक्रम में प्रषिक्षित होने आते हैं।
7. कुम्भ सहित किसी भी अन्य धार्मिक–आध्यात्मिक आयोजनों में बताई जाने वाली पुराणों आदि षास्त्रों में वर्णित कहानियों, कथाओं तथा घटनाओं में मानव के लिए उपयोगी कोई न कोई अर्थपूर्ण सन्देष अवष्य छिपा होता है। कथा सुनाना मात्र किस्सागोई करना नहीं है जैसा कि बहुधा कथाकारों को किस्सागोई करते हुए देखा जाता है। कथाकारी वास्तव में जनमानस के पुनष्चर्या पाठ्यक्रम की भाँति होता है। यह बात अलग है कि परम्परागत कथावृत्ति में जीवन और जगत के गूढ़ दार्षनिक, आध्यात्मिक एवं जटिल सांसारिक विषयों पर कथाकारों से अपेक्षित मार्गदर्षन प्रायः नहीं मिल पाता है और ऐसे महत्वपूर्ण विषयों का स्थान मात्र किस्सागोई ले लेती है। कुम्भ जैसे महान् आयोजनों में अनेकानेक गुरुओं, स्वामियों, सन्यासियों, कथाकारों व वार्ताकारों आदि द्वारा किए जा रहे प्रवचनों तथा किस्सागोईयों में भारतीय षास्त्रों की मूल्यवान ज्ञान सम्पदा तथा भारतीय संस्कृति के कालजयी सनातन तत्व प्रायः क्यों नहीं होते हैं, इसकी विषलेष्णात्मक पड़ताल होनी ही चाहिए।
8. भारतीय संस्कृति के मूल तत्व क्या हैं, और क्या यह तत्व बाबाओं और कथाकारों के विमर्ष और प्रवचनों में दिखाई देते हैं। मानव जाति के लिए वेदों का उद्घोष रहा है ''मनुर्भव'' अर्थात् मनुष्य बनों। मनुष्य बनने का अर्थ है कि मानवोचित समस्त कर्म जिसमें ज्ञान, विज्ञान, परमार्थ, षील–सदाचार, जीवन के चार परम लक्ष्य–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष (पुरुषार्थ चतुष्टय) सम्मिलित हैं, की प्राप्ति के लिए कर्मषील रहना। मानव जीवन के यह उदात्त लक्ष्य बाबाओं के प्रवचनों के केन्द्र में होने चाहिए, होते हैं या नहीं यह अलग बात है। भारत राष्ट्र की इतिहास में लम्बे समय तक गुलामी, समाज का

विभिन्न जातीय व वर्गीय समूहों में विभाजन और उनमें परस्पर कटुता, वैष्विक परिदृष्य, भारत और भारतीयों की विष्व में स्थिति, जनसांख्यिकी की समुदायवार स्थिति, धर्मान्तरण, भारतीय संस्कृति के प्रति भारतीयों का क्षीण होता आग्रह और इन जैसे अन्य ज्वलंत प्रष्नों पर विमर्ष बाबाओं और कथाकारों की कथाओं में प्रायः स्थान क्यों नहीं पाता है, इस पर भी कुम्भ में विद्वत वर्ग के बीच विमर्ष होना चाहिए। भारतीय समाज के समक्ष चुनौती के रूप में उपस्थित उपरोक्त ज्वलंत प्रष्नों से बच कर निकल जाना और षास्त्रों के आर्थिक दोहन को ही अभीष्ट बना लेना कथाकार–जगत के लिए कदापि उचित नहीं है। दार्षनिक स्तर पर व्याप्त मतवैभिन्य एवं बिखराव के कारण अनेकानेक मतों, सम्प्रदायों, विष्वासों तथा उपासना समूहों में बँटा सनातन भारतीय समाज भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों व प्रतिमानों से किस प्रकार दूर होता चला जा रहा है, यह सम्पूर्ण धर्म–अध्यात्म जगत एवं स्वामी सन्यासी जगत की चिन्ता और विमर्ष का विषय होना चाहिए और कुम्भ इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त मंच हो सकता है जहाँ कैमरा, मोबाइल, इण्टरनेट, फेसबुक आदि जैसे आधुनिक संसाधनों का खुलकर उपयोग करने वाला बाबा–जगत भारतीय समाज की आज के दौर की उपरोक्त चुनौतियों पर भी विमर्ष करे और जनमानस को उनके निराकरण के लिए तैयार करे तो निष्चित रूप से इससे भारतीय संस्कृति और समाज का बड़ा भला होगा और कुम्भ का आयोजन तब सचमुच में सार्थक सिद्ध होगा। धर्म जगत में व्याप्त आडम्बर, षास्त्रों में आई परस्पर प्रतिकूल अवधारणाएँ और उससे समाज में समय समय पर उत्पन्न होने वाले विभ्रम और वैमनस्य का निराकरण तथा प्रतिकूल षास्त्रीय अवधारणाओं में किस प्रकार समन्वय बिठाया जा सकता है, जैसे प्रष्न भी धर्माचार्यों, कथाकारों, स्वामियों और सन्यासियों के मध्य विमर्ष के केन्द्र में होने चाहिए जो कदाचित कुम्भ में दिखाई नहीं देता। सन्त समाज यदि इस पर कुछ कर सके तो यह समाज के व्यापक हित में होगा। कुम्भ जैसे विष्वस्तरीय आयोजनों में जीवन के गूढ़ और गम्भीर विषयों पर विमर्ष यदि मनीषी बाबाओं, स्वामियों व सन्यासियों के प्रवचनों और उपदेषों में भी नहीं होगा तो फिर अन्यत्र कहाँ होगा। सस्कृति सहित मानव की खोजी प्रवृत्तियाँ जड़ (inert) नहीं हो सकती हैं, कालखण्ड विषेष में अटककर ठहरी नहीं रह सकतीं। संस्कृति लोक जीवन का सतत् प्रवाहमान स्वरूप होती है। संस्कृति में लोक जीवन की समस्त स्वस्थ परम्पराओं, जीवन मूल्यों तथा जीवन–षैली का दर्षन होना ही चाहिए। भारतीय संस्कृति के जीवन्त व उदात्त पक्ष क्या हैं, इसका पुरजोर सन्देष मनस्वी बाबाओं के प्रवचनों आदि के माध्यम से सम्पूर्ण विष्व तक जाना ही चाहिए। कुम्भ ऐसे महान् लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए बाबाओं, स्वामियों व सन्यासियों, कथाकारों व वार्ताकारों आदि को सहज ही एक अवसर व मंच उपलब्ध कराता है जहाँ विष्व के कोने कोने से बड़ी संख्या में लोग स्वयं आते हैं। भारतीय संस्कृति को संसार भर में फैलाने का इससे सुनहरा अवसर षायद ही और कोई हो सकता है परन्तु प्रष्न यह है कि क्या पूज्य सन्त समाज इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सजग है।

9. कुम्भ जैसे महान् आयोजनों में जहाँ बड़ी संख्या में षास्त्रज्ञ, मनीषी व विद्वान संत, स्वामी व सन्यासी, कथाकार व वार्ताकार आदि आते हैं, वहीं ऐसे आयोजनों में षास्त्रों की अल्प समझ भी नहीं रखने वाले लम्पटाचार्य, द्वन्दाचार्य, धूर्तानन्दी तथा मायानन्दी भी सक्रिय हो उठते हैं जो अपने प्रवचनों व प्रदर्षनों आदि से भारतीय संस्कृति, भारतीयता, धर्म व दर्षन का सही सन्देष विष्व को नहीं दे पाते हैं और इससे अन्ततः भारतीय संस्कृति के बारे में दुनियाँ के अलग अलग भागों से आए हुए लोगों के बीच गलत धारणा भी बन सकती है।
10. धर्म, दर्षन, भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों तथा उसके मर्म को अच्छे से जानने वाले व्याख्याकारों व बुद्धजीवियों का एक बड़ा वर्ग विष्वविद्यालयों सहित अन्य उच्च अकादमिक संस्थानों में भी सुलभ है

परन्तु इस अकादमिक वर्ग की उदासीनता व निष्क्रियता के चलते भारतीय संस्कृति, धर्म व दर्षन का उदात्त पक्ष विष्व में नहीं जा पाता है। यदि बाबा समाज का एक भाग संस्कृति, धर्म व दर्षन की समुचित व्याख्या व उसका प्रस्तुतीकरण महाकुम्भ जैसे मंचों और अवसरों पर कर पाने में अक्षम हो तो इस दायित्व का सुन्दर निर्वाह विष्वविद्यालयों का सम्बन्धित अकादमिक वर्ग कर सकता है। महाकुम्भ में यह अकादमिक वर्ग भी अपने षिविर लगाए, जनमानस को भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल पक्ष तथा धर्म व दर्षन के वास्तविक स्वरूप से परिचित कराए, इसके लिए नीतिगत स्तर पर प्रयास किया जाना चाहिए।

11. अध्यात्म, धर्म, दर्षन आदि जैसे गूढ़ विषयों पर विद्वत समाज, स्वामी, सन्यासियों के मध्य षास्त्रार्थ की परम्परा भारत की सनातन अकादमिक परम्परा रही है। ''वादे वादे जायते तत्व बोधः, मुण्डे मुण्डे मर्तिभिन्नाः, तर्को अप्रतिष्ठा श्रुतियो विभिन्नाः, नैको ऋषिः यस्य मतं प्रमाणं, धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायां, महाजनों येन गता स पन्थाः'' भारतीय संस्कृति और सनातन चिंतन धारा की परम्परा रही है। धर्म, दर्षन, भारतीय संस्कृति और समाज के समक्ष विद्यमान चुनौतियाँ और उनके समाधान आदि जैसे विषयों पर कुम्भ में सन्तों, स्वामियों, सन्यासियों, कथाकारों, किस्साकारों के बीच षास्त्रार्थ की परम्परा क्यों विलुप्त हो गई, इस पर पुर्नविचार होना चाहिए और इसे फिर से षुरु किया जाना चाहिए। यद्यपि कुछ मनोविनोदी महानुभावों के मतानुसार विभिन्न मतों, मठों, सम्प्रदायों आदि में बँटे हुए सन्तों, कथाकारों, स्वामियों व सन्यासियों आदि को षास्त्रार्थ के प्रयोजन से एक मंच पर लाने से पूर्व आयोजकों को अन्य बातों के अलावाँ इस आषय का भी प्रबन्ध करना होगा कि 'षास्त्रार्थ स्थल' कहीं 'षस्त्र स्थल' में न परिवर्तित हो जाए और वहाँ कानून–व्यवस्था की समस्या न पैदा हो जाए। कुम्भ की सार्थकता के लिए परम आवष्यक है कि कुम्भ के अवसर पर पर्याप्त संख्या में धर्म, अध्यात्म, भारतीय संस्कृति सहित मानव चेतना के समस्त पक्षों से भली भाँति परिचित सुयोग्य, दक्ष और कुषल धर्मोपदेषक, स्वामी व सन्यासी, पथ प्रदर्षक, अकादमिक जगत के विद्वतजन, कथाकार व प्रवचनकर्ता कुम्भ आवें और जनमानस का समुचित मार्गदर्षन करें।

12. कुम्भ में धर्म, दर्षन और अध्यात्म के मन्थन से निकलने वाला सन्देष भारतीय संस्कृति के सार्वभौमिक और कालजयी सिद्धांतों को संसार के कोने कोने तक पहुँचा पाए, कुम्भ के आयोजन का यही मूल उद्‌देष्य हो सकता है।

XXXXXXXXX